RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल-011/2015-17

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख पत्र

वर्षः 45, अंक : 27 एक प्रति 2 : रुपये

कुल पृष्ठ : 8

रविवार 6 अक्तूबर, 2019

विक्रमी सम्वत् 2076, सृष्टि सम्वत् 1960853120

दयानन्दाब्द : 195 वार्षिक शुल्क : 100 रुपये

आजीवन शुल्क : 1000 रुपये

दूरभाष : 0181-2292926, 5062726

E-mail: apspunjab2010@gmail.com,

www.aryapratinidhisabha.org

वर्ष–45, अंक : 27, 3-6 अक्तूबर 2019 तदनुसार 20 अश्विन, सम्वत् 2076 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

विजयदशमी (दशहरा) का पर्व

ले०-श्री सुदर्शन शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

विजयदशमी का पर्व हिन्दू समाज के द्वारा दशहरे के रूप में मनाया जाता है। विजय का यह पर्व आश्विन शुदि दशमी तिथि को सम्पूर्ण उत्तर भारत में धूमधाम के साथ मनाया जाता है क्योंकि इस दिन मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने विजय यात्रा आरम्भ की थी और कुछ समय में ही लंकापति रावण का वध कर असंख्य प्राणियों को उसके अत्याचारों से मुक्त किया था। राम की यह विजय धर्म की अधर्म पर अपूर्व विजय थी। राम ने रावण का राज्य छीनने के लिए लंका पर चढ़ाई नहीं की थी और न लंका की प्रजा को दास बनाकर उसका दोहन करने के लिए ही अपितु आर्य परम्परा के अनुसार अत्याचार के उन्मूलन और धर्म की प्रतिष्ठा के लिए थी। उन्होंने अपनी विजय से सच्चे वीर का आदर्श उपस्थित करके क्षत्रिय धर्म की महिमा का भव्य दिग्दर्शन कराया था। मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने लंका पर चढ़ाई करने के लिए अयोध्या या मिथिला से सहायता प्राप्त नहीं की थी। उन्होंने स्वयं अपने बल पर युद्ध किया था। विजयदशमी का पर्व उस दिन का स्मरण कराता है जब आर्य जाति का जाति सुलभ तेज मौजूद था। जब वह अत्याचार के उन्मूलन और पीड़ितों के रक्षण के लिए शक्तिशाली अत्याचारी के मुकाबले में संगठनात्मक प्रतिभा के बल पर जंगली जातियों को ला खड़ा करना जानती थी। भगवान् राम का हम सत्कार करते हैं क्योंकि उन्होंने आर्य जाति की मर्यादा के अनुरूप नेतृत्व और शौर्य प्रदर्शित किया और विश्वास की भावना को गौरवान्वित किया था।

विजयदशमी के दिन यज्ञशाला के द्वार देश में सुसज्जित, सशस्त्र, चतुरंगिणी सेना को खड़ा करके उनकी नीराजना आरती की जाती थी। नीराजना विधि में स्वस्ति और शान्तिवाचन पूर्वक बृहत् होमयज्ञ होता था जिसमें क्षात्रधर्म के वर्णनपरक मन्त्रों से विशेष आहुतियां दी जाती हैं। वैश्यवर्ण या अन्य व्यवसायी भी इसी प्रकार अपने व्यवसाय के वाहन आदि उपकरणों को सुसज्जित और परिमार्जित करके यज्ञ करते थे। राजा लोग विजयदशमी के दिन से अपनी विजय यात्रा का शुभारम्भ करते थे। वैश्य भी अपने वाहनों में बैठकर इसी प्रकार व्यापार यात्रा का प्रारम्भ सूचक अनुष्ठान करते थे। विजयदशमी के दिन से दिग्विजय यात्रा और व्यापार यात्रा निर्बाध चल पड़ती थी। प्राचीन काल में विजयदशमी का शुद्ध स्वरूप इतना ही प्रतीत होता था। समय के साथ-साथ इसमें परिवर्तन होता चला गया। वर्तमान समय में इस पर्व के अवसर पर राम के अभिनय तथा रामलीला के प्रदर्शन का प्रचार चल पड़ा और जिसने विकृत रूप धारण किया।

दीर्घकाल से विजयदशमी के पर्व पर रामलीला के रचे जाने के कारण जनता में यह मिथ्या धारणा बद्धमूल हो गई है कि विजयादशमी के दिन मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने रावण का वध करके लंका पर विजय प्राप्त की थी। वाल्मीकि रामायण के अवलोकन से इस चिरकालीन कल्पना का निराकरण होता है। वाल्मीकि रामायण में यह स्पष्ट लिखा है कि आज के दिन राम ने पम्पापुर से लंका की ओर प्रस्थान किया था और चैत्र मास की अमावस्या को रावण का वध कहा गया है। वाल्मीकि रामायण से यह भी विदित होता है कि वर्षा ऋतु के चार मास पर्यन्त रामचन्द्र का निवास पम्पापुर में ही रहा। वर्षा ऋतु के बीतने पर हनुमान सीता की खोज में गए थे। इससे प्रतीत होता है कि विजयदशमी के दिन रावण का वध नहीं हुआ था। रामचन्द्र जी की विजय तिथि चैत्र कृष्ण अमावस है।

आजकल हमारे पर्व केवल परम्परागत रूप में रह गए हैं। उत्तरी भारत के व्यापक भागों में रामलीला मनाई जाती है। रावण, कुम्भकरण और मेघनाद के विशाल पुतले बनाकर सार्वजनिक स्थानों पर प्रतिष्ठित किए जाते हैं और विजयदशमी और दशहरे के दिन उन्हें जला दिया जाता है। इन पुतलों को जलाने से अन्याय, अत्याचार और स्वेच्छाचार के प्रतीक तत्वों का नाश नहीं होता। आज देश में ये तत्व अधिकाधिक पनप रहे हैं। इस समय देश में अनेक प्रकार की कुरीतियां फैल रही हैं। देश में भ्रष्टाचार, अन्याय,पक्षपात के दूषण सर्वत्र दिखाई देते हैं। इन कुरीतियों को दूर करने के बजाय हम पुतलों को जलाकर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री कर लेते हैं। अतः हमारा परम कर्त्तव्य है कि हम सभी अत्याचारों का संसार से लोप करके विजयदशमी आदि पर्वों के शुद्ध और सनातन स्वरूप को जनता में प्रचारित करें। पर्वों के विषय में जो भ्रान्तियां जन-साधारण में फैल चुकी हैं उन भ्रान्तियों का निराकरण करें। विजयदशमी के पर्व का जो ऐतिहासिक स्वरूप है उस स्वरूप को अपने जीवन के अन्दर अपनाने का प्रयास करें।

विजयदशमी के पर्व पर रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण के पुतले जलाने की प्रथा भी हमारे समाज में फैली हुई है। विजयदशमी का जो ऐतिहासिकस्वरूप है उसे भूलकर हम केवल पुतले जलाने तक सीमित रह गए हैं। मात्र पुतले जला देने से बुराईयां समाप्त होने वाली नहीं हैं, अत्याचार मिटने वाले नहीं हैं, भ्रष्टाचार खत्म होने वाला नहीं हैं। अगर ऐसा होता तो आज तक हमारे देश में कोई बुराई नहीं होती । विजयदशमी का पर्व विजय का पर्व है। इस विजय पर्व पर हम भी संकल्प लेकर बुराईयों के खिलाफ लड़कर विजय प्राप्त करें। इस पर्व से प्रेरणा लेकर अगर हम समाज में बदलाव लाने के लिए कार्य करेंगे तो वास्तव में हमारा पर्व मनाना सार्थक हो जाएगा। इसलिए सभी आर्य बन्धुओं ने निवेदन है कि पर्व की पृष्ठभूमि को समझ कर उस पर्व को मनाएं और समाज को भी उसी रूप में मनाने के लिए प्रेरित करें और एक नई दिशा देने का कार्य करें।

शान्ति एवं सौहार्द्र के लिए अध्यापकीय शिक्षा

ले.-शिवनारायण उपाध्याय, 73 शास्त्री नगर दादाबाड़ी, कोटा

समाज में शान्ति स्थापित करने तथा तालमेल स्थापित करने में शिक्षा का बड़ा योगदान रहा है। वेद में शिक्षा के स्थान पर विद्या शब्द का अधिक प्रयोग हुआ है। कहा है कि **'सा विद्या या विमुक्तये'** विद्या वह है जो मनुष्य को संसार से, जन्म मरण के चक्कर से मुक्त कर मोक्ष तक पहुंचा देती है। **'विद्या ददाति विनयम्'** मनुष्य को विद्या नम्र अथवा विनीत बना देती है। विद्या मनुष्य को इस स्थिति में पहुंचा देती है कि वह संसार की प्रत्येक वस्तु में अपनी आत्मा को देखने लगता है तथा अपनी आत्मा में सबकी आत्मा को देखने लगता है, फिर वह किसी से राग-द्वेष कैसे करेगा!

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवा भूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्त्वमनु पश्यतः। यजु. 407

ऐसी विद्या के होने पर समाज में शान्ति और आपसी मेल-जोल, ताल-मेल, भाईचारा का विस्तार तो अवश्यम् भावी है। इसलिए वेद में कहा गया है कि विद्या प्राप्त करने का अधिकार तो मानव मात्र को है-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानी जनेभ्यः।
ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।
यजु. 26.2.

माता पिता का भी यह कर्त्तव्य है कि वे अपनी सन्तान को उचित शिक्षा अवश्य प्राप्त कराने का प्रयत्न करें।

अपेत बीत वि च सर्पतातोयेऽत्र पुराणा ये च नूतनाः।
अदाद्यमोऽवसानं पृथिव्याऽ-अक्रन्निमं लोकमस्मै। यजु. 12.45

भावार्थ-माता पिता और आचार्य का यही परम धर्म है जो सन्तानों के लिए विद्या और अच्छी शिक्षा को प्राप्त कराना। जो अधर्म से पृथक् और धर्म से युक्त परोपकार में प्रीति रखने वाले वृद्ध और जवान विद्वान् लोग हैं वे निरन्तर सत्य उपदेश से अविद्या का निवारण और विद्या की प्रवृति करके कृत्य कृत्य होवें।

विद्या की उत्पत्ति ईश्वर से मानी गई है।

आ गावो अग्मन्नुत भद्रमक्रन्त्सीदन्तुगोष्ठे रणयन्त्वस्मे।
प्रजावतीः पुरूरूपा इह स्युरिन्द्राय पूर्वीरूषसोदुहानाः
अथर्व. 4.21.1

भावार्थ-विद्याएं परमेश्वर से आकर संसार को महाउपकारी हुई हैं। मनुष्य ईश्वर विद्या, शिल्प विद्या आदि अनेक विद्याओं को प्राप्त कर और महापुरूषार्थी प्रधान पुरूष के सहायक होकर बहुत काल तक सुख भोगें।

अगले मंत्र में कहा गया है कि प्रतापी राजा स्वार्थ छोड़कर विद्यादानादि में धन को व्यय करता है, विद्याबल से धन बढ़ाता हुआ संसार को बहुत लाभ पहुंचाता है।

न ता नशन्ति न दधाति तस्करो ना सामामित्रो व्यथिरादधर्षति।
देवाश्च याभिर्यजते ददाति च ज्योगित् ताभिः सचते गोपतिसहः।
अथर्व. 4.21.3

भावार्थ-विद्या अक्षय कोष है। चोर उन्हें चुरा नहीं सकता है। पीड़ा पहुंचाने वाला व्यथाकारी शत्रु इन की हंसी नहीं उड़ा सकता है। विद्याओं का स्वामी जिन विद्याओं से दिव्य गुणों को पूजता और समाज को देता है, वह यशस्वी होकर बहुत काल तक आनन्द भोगता है।

फिर विद्या के लाभ गिनाये गये हैं। कहा गया है-

गावो भगो गाव इन्द्रो म इच्छाद् गावः सोमस्य प्रथमस्य भक्षः।
इमा या गावः स जनास इन्द्र इच्छामि हृदा मनसा चिदिन्द्रम्।
अथर्व. 4.21.5

अर्थ-विद्याएं ही धन है, विद्याएं ही परम ऐश्वर्य हैं, विद्याएं अति श्रेष्ठ अमृत के सेवन के स्थान हैं, यह मेरी इच्छा हो। हे मनुष्यो। ये विद्याएं ही परम ऐश्वर्य है और मैं अपने हृदय से विज्ञान के साथ इन्हीं की चाह करता हूँ।

यूयं गावो मेदयथा कृशं चिद श्रीरं चित् कृणुथा सुप्रतीकम्।
भद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचो बृहद् वो वयँ उच्यते सभासु।
अथर्व. 4.21.6

भावार्थ-हे विद्याओं। तुम दुर्बल से भी, श्री रहित से भी, निर्धन से भी स्नेह करती हो उन्हें बड़ी प्रतीति वाला अथवा बड़े रूप वाला बना देती हो। हे कल्याणी विद्याओं। तुम घर को मंगलमय बना देती हो। विद्वानों द्वारा प्रकाशमान सभाओं में तुम्हारी बड़ी शक्ति की ही प्रशंसा की जाती है।

रयिर्नयः पितृवित्तो वयोधाः सुप्रणीतिश्चिक्वितुषो न शासुः।
स्योन शीरतिथिर्न प्रीणानो होतोवसद्म विधतो वि तारीत्।
ऋ. 1.73.1

भावार्थ-विद्या धर्मानुष्ठान विद्वानों का संग तथा उत्तम विचार के बिना किसी मनुष्य को विद्या और सुशिक्षा का साक्षात्कार पदार्थो का ज्ञान नहीं होता और निरन्तर भ्रमण करने वाले अतिथि विद्वानों के उपदेश के बिना कोई मनुष्य सन्देह रहित नहीं हो सकता। इससे सब मनुष्यों को अच्छा आचरण करना चाहिए।

ऋ. 1.72.3 में कहा गया है कि कोई भी मनुष्य बिना वेद विद्या के पढ़े विद्वान् नहीं हो सकता तथा उसमें पवित्रता भी नहीं होती इसलिए सब मनुष्यों को उचित है कि इस धर्म अर्थात् विद्याध्ययन का सेवन नित्य करें। इसी को ध्यान में रखकर यजुर्वेद अध्याय 12 मंत्र 46 में कहा गया है-जिज्ञासु मनुष्यों को चाहिये कि सदैव विद्वानों से विद्या प्राप्ति की इच्छा कर प्रश्न किया करें कि जितना आप लोगों को पदार्थ विद्या का ज्ञान है उतना आप हम लोगों को प्राप्त कराओ और जितनी हस्तक्रिया आप जानते हो उतनी सब हम लोगों को सिखाओ।

यजुर्वेद 12.48 में कहा गया है कि इस जगत् में जिसको सृष्टि के पदार्थों का ज्ञान जैसे होवे वैसा ही दूसरों को बतावे जो कदाचित् दूसरों को न बतावे तो वह नष्ट हुआ ज्ञान किसी को प्राप्त नहीं हो सकेगा।

धारयन्त आदित्यासो जगत्स्था देवा विश्वस्य भुवनस्यगोपाः।
दीर्घाधियो रक्षमाणा असुर्य-मृतावान श्चयमाना ऋणानि।
ऋ. 2.27.4

अर्थ-हे मनुष्यो। जो चर और अचर जगत् को धारण करते हुए, सब निवास के आधार स्थावर और प्राणिमात्र जङ्गम जगत् के रक्षक बड़ी बुद्धि वाले, मूर्खों के धन की रक्षा करते हुये, सत्य के सेवी दूसरों को देने योग्य विद्याओं को बढ़ाते हुये, पूर्ण विद्या वाले सूर्य्यादि के तुल्य तेजस्वी विद्वान् लोग बुद्धि से भीतर देखते हैं वे अध्यापक होने योग्य हैं।

स्वामी दयानन्द इस ऋचा के भावार्थ में लिखते हैं कि यदि विद्वान् पढ़ने वाले विद्यार्थियों को विद्या न देवें तो वे ऋणी हो जावें। गुरू के ऋण चुकाने की यही विधि है कि स्वयं पढ़कर दूसरों को पढ़ाना चाहिये। विद्या हमको अध्यापकों द्वारा प्राप्त होती है, इसलिए अब हम इस विषय पर विचार करें कि अध्यापक में किन गुणों व योग्यता की आवश्यकता होनी चाहिये तथा उसे स्वयं को कैसा प्रशिक्षण लेना चाहिये। अध्यापन का कार्य सरल नहीं है। अध्यापक को विभिन्न वर्गों एवं विभिन्न सामाजिक स्तर के परिवारों के बालक बालिकाओं को साथ-साथ पढ़ाना होता है। उसे बालक को समझने में मनोविज्ञान का सहारा लेना चाहिये। अध्यापक में स्वाध्याय के प्रति स्वाभाविक लगन होनी चाहिये। नियमितता, कार्यशीलता एवं कर्त्तव्य परायणता के गुणों का उसे आगार होना चाहिये। पक्षपात, हठ, दुराग्रह, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, पूर्वाग्रह आदि दुर्गुणों से उसे मुक्त होना चाहिये। उसे सभी की उन्नति और सुख के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिये। अब हम इस विषय को वेद के शब्दों में ही रखते हैं-

अध्यापक को श्रेष्ठ विद्वान् से पढ़ाने की कला सीखनी चाहिये-

अग्ने तव त्यदुक्थ्यं देवेष्वस्त्याप्यम्।
स नः सत्तो मनुष्वदा देवान् यक्षि विदुष्टरो वित्तं मे अस्य रोंदसो। ऋ. 1.105.13

अर्थ-हे समस्त विद्याओं को जानने वाले विद्वान् पुरूष। आपका वह जो पाने योग्य ज्ञान मनुष्यों में जैसा हो वैसा ही अति उत्तम विद्यावचन विद्वानों में है। वह अविद्या आदि दोषों को नाश करने वाले, अति विद्या पढ़े हुए आप हमको विद्वान् बनाते हुए उन विद्वानों की पदवी तक पहुंचाइये।

अगले मंत्र में कहा गया है कि वे मनुष्य भाग्यहीन है जो विद्वानों से विद्या और शिक्षा प्राप्त न करके उनका विरोध करता है। ऋ. 1.105.18 में कहा गया है कि जो विद्वान् चन्द्रमा के समान शान्त स्वभाव और सूर्य के समान विद्या के प्रकाश करने को स्वीकार करके संसार में समस्त विद्याओं को फैलाता है वही आप्त अर्थात् उत्तम विद्वान् है। उसी से शिक्षा प्राप्त करनी चाहिये।

अध्यापक का समझाने का ढंग इस प्रकार का होना चाहिये कि

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय

रावण की काया नष्ट हुई है, कर्म नहीं

प्रतिवर्ष दशहरे के अवसर पर लोग रावण, कुम्भकर्ण और मेघनाद के पुतले जलाते हैं। परन्तु अगर समाज में चहुँ ओर दृष्टिपात किया जाए तो लगता है कि रावण का केवल शरीर नष्ट हुआ है, उसके कर्म नहीं। आज भी समाज में रावण के प्रतिनिधि घूम रहे हैं जो धर्म का चोला ओढ़कर रावण जैसे कर्म कर रहे हैं। ऐसे लोगों को रावण के वंशज कहा जा सकता है जो उसके प्रतिनिधि बने हुए हैं। रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण के पुतले जलाने वालो! अगर जलाना ही है तो अपने अन्दर छिपे रावण को जलाओ। अपने अन्दर के काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी बुराईयों को जलाओ। अगर सचमुच रावण को जलाना चाहते हो तो समाज में जो बुराईयां, कुरीतियां, फैल रही हैं, अमानवीय अत्याचार हो रहे हैं, लूटपाट की घटनाएं हो रही हैं, माँ, बहन और बेटियों पर जुल्म हो रहे हैं, इन सबके विरूद्ध लड़ने का संकल्प लो। हजारों वर्षो से हम रावण का प्रतीक मानकर पुतलों को जलाते है। रावण को हम सभी दुष्ट और बुराई का प्रतीक मानते हैं। परन्तु कभी अपने अन्दर झांककर देखने का प्रयत्न नहीं किया कि कहीं हमारे अन्दर भी तो रावण रूपी अहंकार, क्रोध, लोभ आदि तो विद्यमान नहीं हैं। हमें अपने अन्दर के रावण रूपी दुर्गुणों को नष्ट करना होगा।

प्रतिवर्ष हमारे देश में दशहरे का पर्व मनाया जाता है। इस अवसर पर देश के प्रत्येक कोने में बुराई के प्रतीक रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण के पुतले जलाए जाते हैं। परन्तु आश्चर्य इस बात का है कि प्रतिवर्ष पुतले जलाने पर भी रावण जलता क्यों नहीं हैं? हजारों वर्षों से इसी प्रकार ये पुतले जलाए जा रहे हैं फिर भी समाज में रावण का नाश नहीं हुआ है। आज भी समाज में मानवता का चोला पहनकर रावण के प्रतिनिधि घूम रहे हैं। जब तक समाज से बुराईयों का नाश नहीं होगा, बलात्कार जैसे जघन्य अपराध समाप्त नहीं होंगे तब तक केवल पुतले जलाने से कुछ नहीं होगा। दशहरे से कुछ दिन पहले रामलीलाएं शुरू हो जाती हैं। राम के जीवन का अभिनय किया जाता है। मर्यादा पुरूषोत्तम राम के जीवन की झांकियां निकाली जाती हैं। सभी लोग बड़े उत्साह के साथ इस पर्व को मनाते हैं। रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण के पुतले बनाने की कई दिन पहले तैयारियां शुरू हो जाती हैं। बड़े-बड़े पुतले इन तीनों के तैयार किए जाते हैं। दशहरे के दिन लोग बड़े उत्साह के साथ उस जगह पर इकट्ठे होते हैं जहां पर रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण के पुतलों को सजाया होता है। लोगों में बड़ा उत्साह और उमंग होती है। लोगों को बड़ी बेसब्री से इन्तजार होता है कि कब इन पुतलों को आग लगाई जाए और पुतलों के जलने का आनन्द लिया जाए। पुतलों के जलने के बाद सभी लोग बड़े उत्साह और खुशी के साथ अपने-अपने घरों को वापिस आ जाते हैं। पुतलों को जलाकर वे सोचते हैं कि हमने इनको जला दिया। यह सब देखने पर मन में एक प्रश्न उठता है कि पुतलों को जलाने से क्या इनको नष्ट किया जा सकता है? क्या रावण और कुम्भकर्ण मर चुके हैं? क्या मेघनाद मेरे देश से नष्ट हो चुका है? इतिहास में तो यही लिखा है। रामायण भी इसी बात की पुष्टि करती है। प्रतिवर्ष यह दशहरा भी इसी उपलक्ष्य में मनाया जाता है। परन्तु मुझे तो ऐसा लगता है कि ये तीनों आज भी जीवित हैं। केवल उनके पार्थिव शरीर ही भस्म हुए हैं-सूक्ष्म शरीर यहीं घूम रहे हैं, केवल काया नष्ट हुए हैं काम नहीं।

त्रेतायुग के समय में एक रावण पैदा हुआ था और उसका अपराध सिर्फ इतना था कि उसने सीता का अपहरण किया था। परन्तु आज तो घर-घर में रावण बैठा है। माँ, बहन और बेटियां आज अपने घर में भी सुरक्षित नहीं हैं। दिन-दहाड़े भरे बाजार में उनके साथ छेड़छाड़ की जाती है, अपहरण किया जाता है और बलात्कार जैसी घटनाओं को अन्जाम दिया जाता है। छोटी-छोटी बच्चियों के साथ बलात्कार किया जाता है, भ्रूण हत्या के द्वारा उसे जन्म से पहले ही नष्ट किया जाता है। कम दहेज लाने पर उसे प्रताड़ित किया जाता है और उसे आत्महत्या करने को मजबूर किया जाता है। दिन-प्रतिदिन समाचारपत्रों में ऐसी अनेकों दिल को दहला देने वाली घटनाएं पढने को मिलती हैं। राम का नाम लेने वाले, रामलीलाएं करने वाले उनके जीवन का अभिनय तो करते हैं परन्तु उनके आदर्शों को अपने जीवन में नहीं अपनाते। राम का नाम लेने वाले आज धन सम्पत्ति के लिए भाई-भाई का खून कर देते हैं, बेटा बाप की हत्या कर देता है। जिस राम ने अपने भाई के लिए अयोध्या की राजगद्दी का त्याग कर दिया था, पिता दशरथ के न चाहते हुए भी उनके दिए वचनों को पूरा करने के लिए वनवास को गए थे , आज अपने आपको उसी राम का अनुयायी मानने वाले थोड़ी सी धन-सम्पत्ति और जमीन जायदाद के लिए एक दूसरे के दुश्मन बन जाते हैं। आज हम पूजा राम की करते हैं और अनुकरण रावण का कर रहे हैं। प्रतिवर्ष लाखों रूपये खर्च करके रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण के पुतले जलाते हैं परन्तु ये फिर भी नहीं जलते, फिर दूसरे वर्ष इन्हें जलाते हैं। इसी प्रकार यह पुतला जलाने का सिलसिला कई वर्षों से चला आ रहा है परन्तु यह रावण, मेघनाद और कुम्भकर्ण ऐसे हैं जो जलते ही नहीं, नष्ट नहीं होते। सब रावण के प्रतिनिधि हैं, कुम्भकर्ण के भतीजे हैं, कोई काम करना नहीं चाहता है, पर इच्छा है सारा धन मेरे बैंक में चला जाए, सारा अन्न घी मेरे घर में भर जाए, सारी कोठियां मेरी हों, सारी कारें मेरी हों। हों कैसे? अपनी मेहनत की कमाई से नहीं अपितु मेघनाद रूपी भ्रष्टाचार के कारण।

बन्धुओं इन पुतलों को जलाने से पहले हमें अपने अन्दर के काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी बुराईयों को जलाना होगा। अगर सचमुच रावण को जलाना चाहते हो तो समाज में जो बुराईयां, कुरीतियां, फैल रही हैं, अमानवीय अत्याचार हो रहे हैं, लूटपाट की घटनाएं हो रही हैं, माँ, बहन और बेटियों पर जुल्म हो रहे हैं, इन सबके विरूद्ध लड़ने का संकल्प लो। पुतले जला देने से बुराईयां समाप्त होने वाली नहीं हैं। अगर ऐसा होता तो आज तक हमारे देश में कोई बुराई नहीं होती । यह पर्व तो प्रतिवर्ष मनाते रहेंगे, प्रतिवर्ष हम पुतले जलाते रहेंगे परन्तु आज समाज से रावण के कर्मों को नष्ट करना है, रावण के प्रतिनिधित्व को समाप्त करना है। इस पर्व पर हम सभी यह संकल्प धारण करें कि आज समाज में रावण के जितने भी प्रतिनिधि छुपे हुए हैं जो अपने आपको सभ्य दिखाने का ढ़ोंग करते हैं ऐसे असमाजिक तत्त्वों से राष्ट्र को बचाएं। दहेज प्रथा, भ्रूण हत्या, अन्धविश्वास आदि जितनी भी बुराईयां इस समाज को नष्ट करने वाली हैं, उन बुराईयों एवं कुरीतियों को जड़ से खत्म करने का दृढ़ निश्चय करें तभी दशहरे का पर्व मनाना सार्थक हो सकता है।

प्रेम भारद्वाज

संपादक एवं सभा महामन्त्री

वैदिक अग्नि विज्ञान

ले.-डॉ. प्रतिभा पुरन्धि ईशावास्यम 14812, गोविन्द नगर, अम्बाला छावनी

अग्नि तत्व संसार का सर्वाधिक व्यापक, गतिशील, और शक्तिशाली तत्व है। आधुनिक युग में वैज्ञानिक प्रगति का मूलाधार यह अग्नितत्व ही है। वेदों में अग्नि का सबसे अधिक वर्णन प्राप्त होता है।

ऋग्वेद का प्रारम्भ ही 'अग्नि' शब्द से है। ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र में ही अग्नि का महाविज्ञान निहित है। यजुर्वेद-13/40 में कहा गया है-

अग्निर्ज्योतिषा ज्योतिष्मान् रुक्मो वर्चसा वर्चस्वान्।

सहस्रता असि सहस्राय त्वा।।

यजु. 13/40

हे अग्ने! तू ज्योति से ज्योतिष्मान है। सुवर्ण सदृश सुखद वर्च से वर्चस्वान् है। तू सहस्रों सुखों का दाता है अत: सहस्रों प्रकार के सुख के लिए मैं तुझे स्वीकार करता हूँ।

अग्नि का निवास पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक में है। पृथ्वी में अग्नि नाम से, अन्तरिक्ष में विद्युत् नाम से और द्युलोक में सूर्य नाम से। अग्नि संसार में अनेकों सुख प्रदान करती है। अग्नि के विविध गुण, कर्म अनुसार अनेक नाम हैं। तथा-

और्वभृगु: यह अग्नि भूमि के भीतर सब पदार्थों का भर्जन अर्थात् परिपाक करती है।

अप्नवान् यह अग्नि रसों और औषधियों में शान्तभाव से रहती है और रस, अम्ल तथा क्षारयुक्त में प्रकट होती हैं।

इन दोनों अग्नियों का वर्णन एक साथ निम्न मन्त्र में प्राप्त होता है-

और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदाहुवे। अग्निं समुद्रवाससम्।। साम. 1/3/8 (18) अर्थात् आकाश में व्यापक शुद्ध अग्नि की और्वभृगु तथा अप्नवान् अग्नि के समान स्मरण करता हूँ।

जातवेदा: केवल सूर्य ही अग्निमय नहीं है अपितु यह अग्नि उदर में जठराग्नि, जल में वडवाग्नि, काष्ठ, धातु, पत्थर, पृथिवी के भीतर अनेक गैसों के रूप में विद्यमान है। इसलिए इस अग्नि को जातवेदा अग्नि भी कहा गया। निरुक्तकार यास्क ने जातवेदा की निरुक्ति इस प्रकार की है-'जातानि वैनं विदु:, जाते जाते विद्यते इति वा, जातवित्त वा जातधन:, जातविद्या वा जातप्रज्ञान:।(7.5)'

इन विग्रहों के अनुसार जिस अग्नि को हम सभी जानते हैं, जो सभी पदार्थों में पाई जाती है। जिसे रगड़ मन्थन के द्वारा पाया जाता है, जिससे कार्य लेकर धन, ऐश्वर्य आदि की प्राप्ति की जा सकती है, जो अन्धेरे में सब वस्तुओं को प्रकाशित करती है और जिसे पाने की चाह सभी मनुष्यों में रहती है वह अग्नि जातवेदा अग्नि है। साम. 1/8/7 (79) 99, 103 आदि में इसका विस्तृत वर्णन है। वहाँ कहा गया है-'यह जातवेदा अग्नि हवियुक्त होता हुआ स्तुत होता है। यह हमारे लिए उत्तम धन व अन्न प्रदान करे।' 'हे मनुष्य! तू उस अग्नि के गुणों का प्रकाश कर जो सबका उपकार करता है, जिसका धुआं चतुर्दिक् व्याप्त हो रहा है। जिसके तेज़ से लोग अवगत नहीं।'

द्रविणोदा: धन और बल को द्रविण कहते हैं अत: धन और बल देने वाली अग्नि को द्रविणोंदा अग्नि कहा जाता है।

सामवेद में कहा गया-

देवो वो द्रविणोदा-पूर्णा विवष्ट्वासिचम।

उद्वा सिज्यध्वमुप वां पृणध्वमादिद्वो देव ओहते।।

1/6/1 (55)

अर्थात् अग्नि देवता तुम्हारी भरी हुई स्रुवा को स्वीकार करे। तुम उपपृणध्वंवा= तुम और भरो उत् सिञ्चध्वम= ऊपर छोड़ो। अग्नि तुम्हारी आहुति को आत् इत् = तत्काल ही पहुँचाता है। अग्नि से ही शरीर में बल है। अग्नि से ही शिल्पी धन की प्राप्ति करते हैं इसलिए अग्नि को द्रविणोदा भी कहा जाता है।

वड़वानल: साम. 6/3/6 (607) में कहा गया है-"वृष्टि जल पृथिवी में गिरते हैं और भूमि के जल में मिल जाते हैं तब वह जल नदीरूप होकर समुद्र में स्थित वड़वानल को तृप्त करते हैं। जलों के स्रोत अनल के निकट सभी जल शुद्धता से प्राप्त होते हैं।"

ये सभी अग्नियाँ पार्थिव हैं। अन्तरिक्षस्थ अग्नि विद्युत् कहलाती है। इन तीन अग्नियों का वर्णन वेद में इडा, सरस्वती और भारती नाम से प्राप्त होता है। वहाँ इन्हें शक्ति के रूप में वर्णित किया गया अत: उन्हें देवी कहा गया। तथा-

आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विडा मनुस्वदिह चेतयन्ती।

तिस्रो देवीबर्हिरेदं स्योनं सरस्वती स्वपस: सदन्तु।।

अर्थात् हमारे यज्ञ में भारती=आदित्यज्योति शीघ्र प्राप्त हो। मनुष्य की तरह चेताने वाली इडा=पृथिवीस्थ अग्नि हमारे इस यज्ञ में शीघ्र प्राप्त हो। सरस्वती= जल में रहने वाली विद्युत् भी हमें शीघ्र प्राप्त हो। अनेक उत्तम कर्मों को सिद्ध करने वाली ये तीनों देवियां हमारे इस सुखकारी शिल्पयज्ञ में उपस्थित हों अर्थात् इन तीनों प्रकार की अग्नियों से विविध कार्य लेते हुए हम जीवन को सुखमय बनायें।

वैश्वानर अग्नि: आदित्य और विद्युत् से सम्बद्ध अग्नि को वैश्वानर अग्नि कहा जाता है। निरुक्तकार ने 7/6/20 में इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार की है-विश्वान्नरान् नयति...... वैश्वानर: अर्थात् यह सब मनुष्यों को ले जाता है, सभी मनुष्य इसे प्राप्त करते हैं। निरुक्त में पूर्व तथा उत्तरपक्ष प्रस्तुत करते हुए इसकी विस्तृत चर्चा की गई है। वहाँ कहा है-अयमेवाग्नि...... सम्पद्यते। अर्थात् सूर्य और विद्युत् को विश्वानर कहा जाता है। सूर्य और विद्युत् से उत्पन्न होने वाली अग्नि वैश्वानर कही जाती है। जब तक वैद्युत् अग्नि मेघ में रहती है और जब तक वह मेघ से पृथक होकर पृथिवी पर नहीं गिरती तब तक वह विद्युत् स्वभाव वाली रहती है। वह जल से प्रदीप्त होती है अर्थात् मेघ के घने होने पर और भी तेज हो जाती है और अन्य पार्थिव वस्तु को पाकर शान्त हो जाती है किन्तु यही विद्युत् जब कहीं शुष्क वृक्ष पर गिरती है तो पार्थिव अग्नि बनकर जलने लगती है और जल से शान्त होती है।

सूर्योदय होने पर उसके फोकस से कंस मणि या सूखा गोबर आदि भी जलने लगते हैं। इस प्रकार सूर्याग्नि इन सब के माध्यम से पृथिवी पर लाई जा सकती है। यही बात निम्न मन्त्र से कही गई है-

मूर्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आ जातमग्निम्।

कविं सम्राजमतिथिं जनाना- मासन्ना पात्रं जनयन्त देवा:।।

साम. 1/7/5(67)

विद्वान् ऋत्विज् लोग हमारे यज्ञ में पृथिवी से द्युलोक के ऊर्ध्व भाग को जाने वाले दहकते हुए सदा चलने वाले प्राणियों के रक्षक देवों के मुख वैश्वानर अग्नि को सब ओर से प्रकट करें।

दैवोदास अग्नि:

प्र दैवोदासो अग्निदेव न मज्मना।

अनुमातरं पृथिवीं विवावृते नाकस्य शर्मणि।। साम. 5।

द्युलोक में उत्पन्न होने वाला अग्नि प्रकाशमान होकर सूर्य के समान समस्त प्राणियों की माता पृथिवी के चारों ओर बलपूर्वक छा जाता है और अन्तरिक्ष के आश्रय में स्थिर है अर्थात् द्युलोक में बैठा हुआ सूर्य बड़े वेग से अपनी प्रकाश किरणों को पृथिवी पर भेजता है।

पं. तुलसीराम जी ने इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए लिखा है-'पृथ्वी में एक प्रकार की गर्मी है जिसको वेद की भाषा में दैवोदास कहा है क्योंकि वह पृथ्वी से निरन्तर बाहर को निकलती रहती है और जिस प्रकार सूर्य की धूप पृथिवी के चारों ओर छाती है इसी प्रकार बिजली के बल से निकलकर वह भी द्युलोक के घर में अर्थात् द्युलोकरूप घर में स्थित है। और वर्षादि की हेतु है। इस प्रसंग में तुलसीराम जी ने द्युलोक का अर्थ भी बताया है-पृथिवी के दूर चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश है वही द्युलोक है और उसमें वर्त्तमान समस्त दिव्य पदार्थ निरुक्त में लिखे 'द्युस्थान देवता' है। सूर्य पृथिवी से बहुत बड़ा है पृथिवी उसकी अपेक्षा बहुत ही छोटी है इस कारण सूर्य से जो प्रकाश की धारा बहती है वे पृथिवी के छोरों को छूती हुई सुकड़ती-सुकड़ती चन्द्र से परे जिस बिन्दु स्थान पर मिल जाएगी वही द्युलोक का आरम्भ है। बस इस दूरी से आगे पृथिवी के चारों ओर अन्धियारा नहीं है और वहाँ के स्थान को द्युलोक जानिए।'

यही दैवोदास अग्नि जब द्युलोक में पहुँचाती है तो वह इन्द्र कहलाती है। और अपनी दिव्यशक्ति से वर्षा पैदा कर फसलों को बढ़ाने में सहायता करती है। यह बात साम. 52 में कही गई है। 53वें मन्त्र में अग्नि को व्यापक और अविनाशी बताया गया है-हे अग्ने! जब तू वन, काष्ठ, या जलरूप माताओं में शान्त होता हुआ लय हो जाता है तब तेरा मार्ग लुप्त नहीं होता क्योंकि तू दूर (नष्ट) होता हुआ भी यहाँ अरणि अथवा मेघ में वह्नि या बिजली के रूप में उत्पन्न हो जाता है।

(क्रमश:)

अन्धविश्वास

ले.-डा. मुनि योगेन्द्र कुमार शास्त्री (जम्मू) म. नं. 132, पुरानी हस्पताल, जम्मू

यह शब्द ही बतला रहा है कि ऐसा विश्वास अन्धा होता है। उपनिषद् में लिखा है कि यदि गुरु स्वयं अन्धविश्वास में फंसा हुआ है तो वह शिष्यों को भी अन्धविश्वास में फंसा देगा। कठोपनिषद् (2-5) में लिखा है-

अविद्यायामन्तरे वर्त्तमानाः स्वयं धीराः पण्डितम्मन्य मानाः।
दन्द्रम्यमाणाः परियन्ति मूढ़ा अन्धेनैव नीयमाना यथान्धाः।।?

अविद्या में ग्रस्त रहने वाले, अपने को धीर तथा पंडित मानने वाले मूढ़जन जैसे अन्धा अन्धे को रास्ता दिखाने का प्रयत्न करे इस प्रकार भटकते रहते हैं। वस्तुतः अन्धविश्वास के मूल में काम करने वाली अविद्या है तथा मिथ्या ज्ञान है। अविद्या का लक्षण करते हुए महर्षि पतञ्जलि योग दर्शन में लिखते हैं-"**अनित्याशुचिदुःखानात्मसु नित्य शुचि सुखात्म ख्यातिरविद्या**" **(योग. 2-5)** अर्थात् अनित्य वस्तुओं को नित्य मानना, हिंसादि अपवित्र कर्मों को पवित्र मानना, दुःखदाई कर्मों को सुखदाई मानना अविद्या है। इसी प्रकार जहाँ आत्मा नहीं है उन जड़ वस्तुओं को तथा मूर्तियों को आत्मा वाला मानना अविद्या है पत्थर की मूर्तियों में प्राण प्रतिष्ठा करके उन्हें भोजन खिलाना, दूध पिलाना, सुलाना, जगाना आदि अविद्या ही है। क्योंकि शारीरिक विषयों का अनुभव करने वाली जीवात्मा इनमें नहीं है। यदि इनमें चेतन जीवात्मा होती तो ये सब मूर्तियाँ अपने हाथ से रोटी खाती, स्वयं पात्र उठाकर दूध पीती। चोर के आने पर अपने गहने चुराने वालों को रोकती परन्तु ऐसा होता नहीं है। अतः यह सब व्यवहार अविद्या की कोटि में आता है। भगवान मिट्टी का है, भगवान् बर्फ का है, भगवान् पत्थर का है, यह मानना मिथ्या ज्ञान है। क्योंकि भगवान् तो चेतन स्वरूप है भौतिक जड़ता उसके स्वरूप में लेशमात्र भी नहीं है।

मूर्ख जनता को अपने सम्प्रदाय में फसाने के लिये सभी सम्प्रदाय मिथ्या चमत्कारों का सहारा ले रहे हैं। मुसलमानों ने कहा कि मस्जिद के चमत्कार से समुद्र मीठा हो गया। हिन्दुओं ने कहा कि सब मूर्तियां दूध पीने लगी। सांई बाबा के समर्थकों ने कहा कि मकान की दीवार पर साई बाबा का चित्र उभर आया है। इत्यादि बातें विज्ञान विरुद्ध तथा मिथ्या है और अन्धविश्वास है। ईसाई भी ऐसे चमत्कार दिखा कर जनता को धोखे देते हैं। श्री कृष्ण की, श्रीराम की मूर्ति लोहे की बना लेगें तथा ईसामसीह की मूर्ति लकड़ी की बना लेगें तीनों पर एक जैसा रंग कर देगें। मूर्ख, भोली भाली जनता को दिखायेगें कि देखो राम और कृष्ण की मूर्ति पानी में डूब गई ईसामसीह की मूर्ति नहीं डूबी तुम इसी पर विश्वास लाओ। यह सरासर धोखा है। जनता ऐसे अन्धविश्वासों में फंस जाती है।

संसार में सत्य को सत्य कहने वाले तथा असत्य को असत्य कहने वाले दुर्लभ होते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती में सबसे अधिक यही गुण था। वे उसी वस्तु को मानते थे जिसकी सत्ता है और जो सम्भव है तथा सृष्टि क्रम के अनुकूल है। वेद में भी यही लिखा है कि तुम सत्य में श्रद्धा करो और असत्य में अश्रद्धा करो-

दृष्ट्वाद्वारूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः।
अश्रद्धामनृतेऽदधात् श्रद्धां सत्ये प्रजापति।।

परमेश्वर ने वेद और सृष्टि के द्वारा सत्य और असत्य को अलग अलग बता दिया है और यह भी कहा है कि जिस वस्तु की सत्ता है उसी में श्रद्धा करो। श्रुत् सत्य को धारण करना ही श्रद्धा है।

जितने भी अन्धविश्वास है उन्हें एक व्यक्ति चालाकी से चलाता है मूर्ख जनता उसमें भेड़ चाल से फंसती चली जाती है। जब सब कुछ लुट जाता है तब होश आता है। अन्धविश्वासों में अपने स्वार्थ के कारण फंसाने वाले अनेकों हैं परन्तु अन्धविश्वास से बचाने वाला महर्षि दयानन्द सरस्वती जैसा कोई कोई वैज्ञानिक ऋषि होता है। वेदों को छोड़कर अन्य सभी धार्मिक ग्रन्थ चमत्कारों से तथा अंधविश्वासों से भरे पड़े हैं। एक से बढ़कर दूसरे ने गप्पें मारी हैं। कुरान, बाईबिल और पुराणों का यही हाल है। ये सभी ग्रन्थ सृष्टि के नियमों के विरुद्ध हैं। बेजान ग्रहों को चेतन की तरह पूजना, उन्हें बुलाना अन्धविश्वास है।

मूर्तियों से लड़कियों की शादी करना, वर्षा के लिये मेढ़क मेढ़कियों की शादी करना, देवी देवताओं को प्रसन्न करने के लिये पशु बलि और नर बलि देना, अन्धविश्वास है। जिनके माता पिता अन्धविश्वासों में फंसे रहते हैं उनकी सन्तान भी अन्धविश्वासों में फंसी रहती है।

सत्य को मानने वाले तथा सत्य का ही प्रचार करने वाले गुरु जब व्यक्ति को मिल जाते हैं तभी अन्धविश्वास मिटता है। वेद में कहा है-सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासन्च वचसी पस्पृधाते। तयोर्यत्सत्यं यतरत् ऋजियः तदित् सोमो अवति हन्त्येसत्।।

ज्ञानी के सामने सत्य और असत्य दोनों प्रकार के वचन आते हैं परन्तु ज्ञानी सत्य की ही रक्षा करता है असत्य का विरोध करता है।

वस्तुतः अविद्या और अन्धविश्वास मनुष्य के सबसे अधिक हानिकर शत्रु है। अन्धविश्वास में पड़ा हुआ व्यक्ति आंख का अन्धा और गांठ का पूरा बन जाता है। जगह जगह वह लुटता रहता है। भयभीत बना रहता है। वह हाथों में कई प्रकार की अंगूठियाँ पहनता है करोड़पति होकर भी राहू और शनि से डरकर लोहे का छल्ला पहनता है। तान्त्रिकों के चक्कर में फंसा रहता है ऐसा व्यक्ति संसार में फंसा रहता है और परमात्मा की प्राप्ति से सर्वदा दूर ही रहता है।

अन्धविश्वास बरसात के कीड़े मकोड़ों की तरह उत्पन्न होते हैं और समाप्त भी हो जाते हैं। कुछ अन्धविश्वास आस्था का स्थान ले लेते हैं लोग बिना सोचे समझे भेड़चाल की तरह चलते रहते हैं। सारा जीवन पहाड़ों पर नदियों पर, सागर पर रेगिस्तान में यात्राएं करते हुए बीत जाता हैं जीवन के मुख्य उद्देश्य धर्म, अर्थ काम और मोक्ष उन्हें प्राप्त नहीं होते।

अन्धविश्वासों से बचना चाहते हो तो सत्यार्थ प्रकाश का ग्यारहवां समुल्लास अवश्य पढ़ लेवें। महर्षि दयानन्द ने सभी अन्धविश्वासों की पोल खोलकर रख दी है।

सरल, सीधे, सत्य के रास्ते पर चलो। पहले जानो फिर मानों, तर्क की कसौटी पर पहले कसलो फिर मानो, किसी काम को बिना सोचे समझें मत करो क्योंकि अविवेक अनेक आपत्तियों का कारण बन जाता है।

एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम्।
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत्।।

-पू० ४.२.५.७

भावार्थ-हे प्यारे मित्रो! आओ, आओ हम सब मिलकर उस सर्वशक्तिमान् सबके नियन्ता एक प्रभु की शीघ्र स्तुति करें, हमारा शरीर क्षणभंगुर है, ऐसा न हो कि हमारे मन-की-मन में रह जाये, इसलिए प्राकृत पदार्थों में अत्यन्तासक्ति न करते हुए, उस स्तुति योग्य सबके स्वामी जगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना उपासना में अपने मन को लगा कर शान्ति को प्राप्त होवें।

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत्।
ब्रह्मकृते विपश्चिते पनस्यवे।।

-पू० ४.२.५.८

भावार्थ-हे सुज्ञ जनो! जिस दयामय जगत्पिता ने हमारे लिए धर्म आदि चार पुरुषार्थों के साधक वेदों को उत्पन्न किया, ऐसा ज्ञानस्वरूप, ज्ञानदाता, महान् जो परम पूजनीय परमात्मा है, उस प्रभु की हम अनन्य भक्ति करें। उसी जगत्पिता की कपट छलादिकों को त्याग कर वैदिक और लौकिक स्तोत्रों से बड़ी स्तुति करें, जिससे हमारा जीवन पवित्र और जगत् के उपकार करने वाला हो।

विश्वतो दावन् विश्वतो न आभर यं त्वा शविष्ठमीमहे।।

-पू० ५.२.१.१

भावार्थ-हे प्रभो! आप ही सबको सब पदार्थ देने वाले हो, आपके द्वार पर सब याचना करने वाले हैं, आप ही सब बलियों में महाबलवान् हो आपके सेवक हम लोग भी आपसे ही माँगते हैं। हमारा सबका हृदय आपके ज्ञान और भक्ति से भरपूर हो, व्यवहार में भी हमारा अन्न वस्त्र आदिकों से पालन पोषण करो। हमारे सब देश भाई भोजन वस्त्र आदिकों की अप्राप्ति से कभी दुःखी न हों सदा सब सुखी रहें, ऐसी कृपा करो।

"कुछ मुख्य-मुख्य क्रान्तिकारियों का संक्षिप्त परिचय"

ले.-पं. खुशहाल चन्द्र आर्य C/o गोबिन्द राय आर्य एण्ड सन्ज़ १८० महात्मा गान्धी रोड़, (दो तल्ला) कोलकत्ता-700007

(गतांक से आगे)

इसी बीच लाला जी दो बार इंग्लैण्ड की यात्राएं की और देश में आये प्राकृतिक प्रकोपों में दीन-दु:खियों की बहुत सेवा की जिससे लाला जी की केवल भारत में ही नहीं विश्व, में काफी ख्याति बढ़ गई।

इस षड्यन्त्र में कुछ 61 अभियुक्तों को शामिल किया गया और इस षड्यन्त्र के नेता करतार सिंह सराभा, भाई परमानन्द, विष्णु गनेशपिंगले, जगता सिंह, हरनाम सिंह आदि मुख्य थे। न्याय का नाटक चला और भाई परमानन्द सहित चौबीस लोगों को फाँसी की सजा सुनाई गई। बाद में 15 नवम्बर 1915 को भाई जी सहित चौबीस में से सत्रह व्यक्तियों को फाँसी न देकर आजीवन कारावास कालापानी के रूप में बदल दी गई। कालापानी कारावास का जीवन भाई जी के लिए बड़ा कष्टदायक था। पर उन्होंने बड़े साहस और धैर्य से इस जीवन को काटा। अन्तत: इनको 20 अप्रैल 1920 को रिहा कर दिया गया। रिहा हो कर वे लाहौर आये और कुछ समय के लिए वे अपनी पत्नी व बच्चों के साथ रहे।

भाई जी की रिहाई से पूरे भारत वर्ष में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। इन्हीं दिनों लाहौर में "नैशनल कॉलेज" की स्थापना हुई। भाई जी उसके उपकुलपति के रूप में कार्य करने लगे। इधर अगस्त 1920 में जब बाल गंगाधर तिलक का देहान्त हो गया तो काँग्रेस की बागडोर गान्धी जी के हाथ में आई। उन्होंने मुसलमानों के तुष्टिकरण का रास्ता अपनाया जिससे हिन्दुओं की अवहेलना होने लगी। भाई जी इस तुष्टिकरण के परिणाम को भांप रहे थे, इसलिए इस नीति से खुश नहीं थे। इसलिए उन्होंने हिन्दुओं का कोई संगठन बनाने की दिशा में विचार किया। अन्तत: डॉ. बी. एस. मुंजे, मदन मोहन मालवीय, स्वामी श्रद्धानन्द व भाई परमानन्द आदि नेताओं ने हिन्दू महासभा का गठन किया गान्धी जी की मुसलमान तुष्टिकरण की नीति के कुपरिणाम सामने आने आरम्भ हो गये परन्तु फिर भी काँग्रेस का प्रभाव बढ़ता गया। सन् 1934 में भाई जी अखिल भारतीय हिन्दू महासभा के अध्यक्ष चुने गये। उन्होंने पूरे देश में हिन्दुओं को जागृत करने का अथक प्रयास किया मगर जब 1935 में चुनाव हुए तो हिन्दुओं ने पुन: काँग्रेस को ही समर्थन दिया। भाई जी हिन्दुओं के इस आत्मघाती निर्णय में भौंच्चके से रह गये। वीर सावरकर जी को जब रत्नागिरी से मुक्त किया गया तो 1937 में उन्हें हिन्दू महा सभा का अध्यक्ष बनाया गया। उन्होंने भाई जी की विचारधारा का प्रबल समर्थन किया तथा देशभर में इसका प्रचार-प्रसार किया। तुष्टिकरण भी नीति से मुसलमान भाईयों का उत्साह इतना बढ़ गया कि दिसम्बर 1930 में लखनऊ में मुस्लिम लीग के सम्मेलन में मोहम्मद इकबाल ने साफ शब्दों में मुसलमानों के लिए एक अलग पाकिस्तान की मांग कर दी। जिसको गान्धी जी के न चाहने पर भी 15 अगस्त 1947 को देना पड़ा। भाई परमानन्द ने पाकिस्तान न बनने के लिए भारी प्रयास किया बाकी हिन्दुओं की कमजोर नीति ने पाकिस्तान को बनने दिया। पाकिस्तान बनने का भाई परमानन्द को भारी दु:ख हुआ और 8 दिसम्बर 1947 को सदा-सदा के लिए अपनी आँखे बन्द कर ली।

लेख को बड़ा न होने देने के लिए, मैं लेख को यहीं समाप्त करता हूँ और आगे भी समय-समय पर इसी प्रकार 4-5 बलिदानी क्रान्तिकारियों का संक्षिप्त जीवन परिचय बराबर लिखता रहूँगा ताकि देश का युवावर्ग को क्रान्तिकारियों का परिचय मिलता रहे और वे भी देश को स्वतन्त्र रखने के लिए तथा देश की उन्नति का समृद्धि को बढ़ाने के लिए अपना सहयोग देते रहें। इसी आशा के साथ इस लेख को यही विराम देते हैं।

योग महिमा

ले.-पं. वेदप्रकाश शास्त्री भवन, 4-E कैलाश नगर, फाजिलका (पंजाब)

योग ऋत है, सत् है, अमृत है।
योग बिना जीवन जानो मृत है।।1।।

योग जोड़ है, वेदों का निचोड़ है।
योगासन का अंग, 'सूर्याय नम:' बेजोड़ है।।2।।

योग से मिटती हैं, आधियां-व्याधियां।
मिटती हैं योग से, त्वचा की बीमारियां।।3।।

योग जीवन को जीने की, जड़ी-बूटी है।
योग ज्ञानामृत पीने की, खुली हुई टूटी है।।4।।

योग, दर्शन है, दिग्दर्शन है, करो ध्यान है।
यह पतञ्जलि का मनन, शोध और वरदान है।।5।।

योग ईस्वर से मिलने की, सर्वोत्तम सीढ़ी है।
ऋषियों ने इसे अपनाया, पीढ़ी दर पीढ़ी है।।6।।

योग गीत है, संगीत है, सरस वादन है।
योग बिन-खर्चे का, सबसे सस्ता साधन है।।7।।

योग आधार है, गीता आदि ग्रन्थों का।
योग आभार है, सरल सौम्य भक्तों का।।8।।

योग से ही होता चरित्र निर्माण, रक्षित होती संस्कृति।
योग से ही बनते संस्कार, विमल होती चित्तवृत्ति।।9।।

योग तारक है, आमरण दु:ख निवारक है।
हर समस्या के समाधान का अचूक कारक है।।10।।

योग में निहित है, पूर्ण जीवन जीने की शक्ति।
योग से ही होंगे प्रभुदर्शन, बढ़ेगी आत्मिक शक्ति।।11।।

रोग, भोग, दुर्योग, मिटते हैं योग से।
होते हैं मोद, प्रमोद, विनोद सब योग से।।12।।

योग उलझे हुए सभी सवालों का जवाब है।
कांटों में भी महकता हुआ, मुस्कराता गुलाब है।।13।।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

पृष्ठ 2 का शेष-शान्ति एवं सौहार्द्र के लिए...

उसकी दी गई विद्या कभी नाश को प्राप्त न हों।

शचीभिर्नः शचीवसू दिवा नक्तं दशस्यतम्।

सा वां रातिरूप दसत्कदा-चनास्मद्रातिः कदा चन।

ऋ. 1.139.5

अर्थ-हे उत्तम बुद्धि का वास कराने वाले विद्वानों। आप दिन एवं रात्रि में कर्मों से, कष्ट उठा कर भी, हम लोगों को विद्या देओ। आपकी दी हुई विद्या कभी नष्ट न हो।

ऋग्वेद 1.139.7 में कहा गया है कि अध्यापक की योग्यता यह है कि वह सब विद्यार्थियों को निष्कपटता से समस्त विद्या पढ़ाकर परीक्षा के लिये उनको पढ़ाया हुआ सुने जिससे पढ़े हुये को वे न भूलें।

अध्यापकों को अपना अध्यापन कार्य ठीक तरह से जानने के लिये प्रशिक्षण भी प्राप्त करना चाहिये। एक श्रेष्ठ अध्यापक को जब अध्यापन कार्य करने में कोई समस्या आ जावे तो उसे किसी विद्वान् के सामने रखकर उसका हल करना जानना चाहिये।

कथा ते अग्ने शुचयन्त आयोदेवाशुर्वाजिभिराशुषाणाः।

उभे यत्तो के तनये दधाना ऋतस्य सामनृणयन्त देवाः।

ऋ. 1.147.1

भावार्थ-सब अध्यापक विद्वान् जन उपदेशक शास्त्रवेत्ता धर्मज्ञ विद्वान् को पूछे कि हम लोग कैसे पढ़ावें। वह विद्वान् उन्हें अच्छे प्रकार सिखावें, क्या सिखावें? कि जैसे ये विद्वान् विद्या तथा उत्तम शिक्षा को प्राप्त इन्द्रियों को जीतने वाले धार्मिक पढ़ने वाले हों वैसे आप लोग पढ़ावें यह उत्तर है।

अगले मंत्र में कहा गया है कि जब आचार्य के समीप शिष्य पढ़े तब पिछले पढ़े हुए की परीक्षा देवे, पढ़ने से पहले आचार्य को नमस्कार कर, उनकी वन्दना करे और जैसे अन्य धीर बुद्धि वाले पढ़े वैसे आप भी पढ़े। ऋ. 7.29.4 में यह बतलाया गया है कि गुरूजन पहले ऋषियों से वेद पढ़ें और फिर बालकों के गुरू बनकर उन्हें पढ़ावें। शिष्य गुरू को पिता के समान माने और निरन्तर उनके सत् चरित्र और ज्ञान की प्रशंसा करें।

अग्निं सून्नुं सन श्रुतं सहसो जातवेदसम्।

वह्निं देवा अकृण्वत्।

ऋ. 3.11.4

विद्वान् लोगों को चाहिये कि अपने पुत्रों के सदृश और लोगों के पुत्रों को समझकर स्नेह से विद्या युक्त और बहुत शास्त्रों को सुनने वाले हो ऐसा करके आनन्द सहित करें। ऋ. 2.28.3 में कहा गया है-माता पिता भी बालकों को यह शिक्षा दें कि हे पुत्रों। जैसे हम लोग उत्तम विद्वान् से नीति विद्या प्राप्त कर सुखी हैं, आनन्दित हैं, वैसे ही तुम लोग भी क्षमाशील होकर अध्यापकों के अनुकूल आचरण करके सुशिक्षित विद्वान् बनो।

ऋ. 1.25.2 में बतलाया गया है कि अध्यापकों को भी क्षमाशील होना चाहिये।

यजुर्वेद 10.16 में कहा गया है कि जिस देश में सूर्य, चन्द्रमा के समान उपदेश करने वाले व्याख्यानों से सब विद्याओं का प्रकार करते हैं वहां सत्यासत्य पदार्थों के बोध से कोई भी विद्याहीन होकर भ्रम में नहीं पड़ता। जहाँ यह बात नहीं होती वहां अंधकार परम्पराओं में फंसे हुये मनुष्य नित्य ही क्लेश पाते हैं।

अब हम थोड़ा अध्यापन विधि पर चर्चा करते हैं-

उत्त त्यं चमसं नवं त्वष्टुर्देवस्य निष्कृतम्।

अकर्त चतुरः पुनः।

ऋ. 1.20.6

जब विद्वान् लोग जो शिल्पी अर्थात् कारीगर का सिद्ध किया हुआ सुख देने वाला कार्य है, उस नवीन दृष्टिगोचर कर्म को देखकर निश्चय से उसके अनुसार फिर भू. जल, अग्नि, वायु से सिद्ध होने वाले शिल्प कामों को अच्छी प्रकार सिद्ध करते है तब आनन्द युक्त होते है।

इस मंत्र में बताया गया है कि अध्यापन विधि में कार्य करते हुये व्यक्ति को दिखाकर उसे काम करने की शिक्षा दी जाती है।

दूसरी वर्णनात्मक शैली है जिसमें किसी विषय का वर्णन लगातार प्रवाहमय भाषण द्वारा किया जाता है, जैसे पुरूष सूक्त, पृथ्वी सूक्त, नासदीय सूक्त आदि।

तीसरी प्रश्नोत्तर विधि है। वेद में सबसे अधिक मंत्र प्रश्नोत्तर विधि का ही समर्थन करते हैं।

ये मंत्र भी तीन प्रकार के हैं जैसे पहले एक मंत्र में प्रश्न पूछा जाता है तथा दूसरे मंत्र में उसका उत्तर दिया जाता है।

दूसरा प्रश्न मंत्र के प्रारम्भ में पूछा जाता है और मंत्र के उत्तरार्द्ध में उसका उत्तर दिया जाता है।

तीसरा मंत्र के प्रथम चरण में प्रश्न पूछा जाता है और दूसरे चरण में उसका उत्तर दिया जाता है।

हम यहां केवल पहले ढंग के मंत्र दे रहे हैं-

कई व्यक्ता नर, सनीला रूद्रस्यमर्याअधास्वश्वाः।

ऋ. 7.56.1

इस संसार में कौन उत्तम प्रसिद्ध प्रशंसा करने योग्य मनुष्य है।

नर्विह्योंषांजन्षि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम्। ऋ. 7.56.2

जिन मनुष्यों के जन्मों को विद्या प्राप्ति कराने वाले न जाने वे प्रसिद्ध नहीं होते हैं और जो विद्या जन्म पाते हैं वे ही कृतकृत्य और प्रसिद्ध होते हैं।

साथ ही शिक्षा को अर्थ उपार्जन से भी संयुक्त किया जाना चाहिये शिक्षक को कुलीन होना भी आवश्यक है जिससे कि अपने शिष्यों के साथ उत्तम व्यवहार ही सदा करें।

प्रयोगों के द्वारा विद्या देने का वर्णन भी छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक उपनिषदों में वर्णित है। छान्दोग्य उपनिषद में उद्दालक ऋषि अपने पुत्र श्वेत केतु को ब्रह्म की सर्वव्यापकता की शिक्षा पानी में नमक घोल कर देते हैं।

बृहदारण्य उपनिषद में ब्रह्मा इन्द्र और विरोचन को भी आत्मज्ञान देने के लिए प्रयोगों को द्वारा विद्या देने की विधि काम में लेते हैं।

सबसे अधिक ध्यान छात्रों के चरित्र निर्माण पर देना है यह भी अध्यापक को सिखाना चाहिये। अध्यापकीय शिक्षा में नैतिक शिक्षा तथा नीति शास्त्र का स्थान भी महत्वपूर्ण है।

तैत्तिरीय उपनिषद् शिक्षा अध्याय वल्ली नवम अनुवाक में कुछ जीवन मूल्यों पर बल देकर कहा गया है-

ऋतं च स्वाध्याय प्रवचने च।
सत्यं च स्वाध्याय प्रवचने च।
तपश्च स्वाध्याय प्रवचने च।
शमश्च स्वाध्याय प्रवचने च।
दमश्च स्वाध्याय प्रवचने च।

फिर एकादश अनुवाक में कहा गया है-

सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्या-यन्मा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य।

प्रजातन्तु मा व्यवच्छेदसीः। श्लोक (1)

देवपितृ कार्याभ्यां न प्रमादितव्यम्। मातृदेवोभव। पितृदेवोभव।

आचार्यदेवोभव। अतिथि देवो भव। श्लोक (2)

यदि अध्यापकीय शिक्षा में इन सभी बातों पर ध्यान दिया जावे तथा अध्यापक पुरूषार्थी तथा सचरित्र हो तो निश्चित रूप से वह राष्ट्र को श्रेष्ठ नागरिक दे सकता है। ऐसे विद्या से सम्पन्न नागरिक निश्चित रूप से राष्ट्र शान्ति एवं भाई चोर का वातावरण बना सकते हैं।

सर्वोपरि महर्षि दयानन्द

ऋषिवर तरी तुलना नहीं हो सकती, किसी एक व्यक्ति महान से।
तेरी तुलना तो हो सकती है, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी और आसमान से।।

तेरी तुलना श्री राम से करुं, वह कृष्ण जैसा था कूटनीतिवान नहीं।
तेरी तुलना कृष्ण से करुं, उसने रखा मर्यादा का इतना ध्यान नहीं।।
दयानन्द तेरे अन्दर दोनों के समस्त गुण पाये जाते हैं समान से।
ऋषिवर.....।।१।।

तेरी तुल्य समझूं मैं बुद्ध को, वह आदि शंकराचार्य जैसा था विद्वान नहीं।
तेरी तुलना करुं शंकराचार्य से, वह बुद्ध जैसा मिला दयावान नहीं।।
तेरे अन्दर दोनों के गुण थे, कह सकते हैं हम स्वाभिमान से।
ऋषिवर.....।।२।।

तेरी तुलना करुं मैं भीम से, उसने रखा भीष्म जैसा ब्रह्मचार्य व्रत महान नहीं।
तेरी तुलना करुं मैं भीष्म से, उसने अन्याय पक्ष लेकर रखा अपना सम्मान नहीं।।
तेरे अन्दर दोनों के गुण विद्यमान थे, पता लगता है आपके व्यक्तित्व महान से।
ऋषिवर.....।।३।।

तेरी तुलना कालीदास से करुं, उसमें चाणक्य जैसा था देश स्वाभिमान नहीं।
तेरी तुलना करुं चाणक्य से, उसमं मिलता सहनशीलता गुण प्रधान नहीं।।
तेरे अन्दर दोनों के गुण पाये जाते, आपका जीवन चरित्र पढ़ते है जब ध्यान से।
ऋषिवर.....।।४।।

तेरी तुलना करुं मैं केशव सेन से, इसमें भारतीय संस्कृति पर था स्वाभिमान नहीं।
तेरी तुलना करुं मैं गांधी से, उसने सोचा तुष्टीकरण का परिणाम नहीं।।
दोनों के गुण भली-भांति जाने जाते, आपके किये जन-कल्याण काम से।
ऋषिवर.....।।५।।

''खुशहाल'' ने खोज लिया सारा इतिहास, अपने प्यारे देश की शान का।
कोई भी व्यक्ति पाया नहीं, ऋषि दयानन्द के चरित्र के समान का।।
आखिर यही कहना उचित है, पीछे रह जाते हैं सब के बलिदान, आपके सर्वस्व बलिदान से।
ऋषिवर.....।।६।।

मोगा में आर्य परिवार का बेटा बना जज

मोगा के प्रतिष्ठित पुरी परिवार एवं आर्य समाज मोगा के भूतपूर्व प्रधान स्वर्गीय श्री जगदीश चन्द्र पुरी जी के पौत्र श्री रोहित पुरी जी का उत्तर प्रदेश जूडीशियल सर्विस में न्यायाधीश बनना केवल मोगा शहर के लिए ही नहीं अपितु पूरे पंजाब के लिए गौरव की बात है। श्री रोहित पुरी जी के जज बनने पर मोगा के समस्त आर्यजनों एवं आर्य समाज मोगा के पदाधिकारियों, सदस्यों में अत्याधिक प्रसन्नता है। श्री रोहित के पिता श्री पुरुषोत्तम पुरी मोगा में पूर्व पार्षद रहे। श्री रोहित पुरी ने बताया कि उत्तर प्रदेश जूडिशियल सर्विस में जज बनने के लिये 65,000 उम्मीदवारों में से केवल 610 उम्मीदवारों का चयन होना था। श्री रोहित पुरी ने कड़ी मेहनत करते हुए इस लक्ष्य को हासिल करके अपने कुल का नाम रोशन किया है। श्री रोहित पुरी जी का परिवार कई वर्षों से आर्य समाज के साथ जुड़ा हुआ है। प्रत्येक रविवार श्री रोहित पुरी के दादा जी एवं दादी जी श्री जगदीश चन्द्र पुरी एवं श्रीमती महेन्द्र कौर पुरी तथा उनके पिता एवं ताया श्री पुरुषोत्तम पुरी एवं श्री नरोत्तम पुरी जी नियमित रूप से प्रत्येक रविवार एवं विशेष अवसरों पर आर्य समाज की गतिविधियों में सम्मिलित होते रहे हैं। आर्य समाज एवं उनके माता-पिता के दिये संस्कारों के कारण श्री रोहित पुरी जी बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि है और पढ़ाई में हमेशा अव्वल रहते हैं।

श्री रोहित पुरी

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब एवं सभी आर्य जन एवं मोगा के नगरवासी श्री रोहित पुरी के उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हैं। श्री रोहित पुरी जी धर्म के मार्ग पर चलते हुए निष्पक्ष न्याय करे। परमात्मा उन्हें ऐसी प्रेरणा और आत्मिक बल प्रदान करे जिससे वे पक्षपात, छल-कपट एवं अन्य बुराईयों से रहित होकर न्यायिक व्यवस्था को नये आयाम तक पहुँचाए।

आर्य समाज लसूड़ी मुहल्ला बस्ती दानिशमंदा जालन्धर का चुनाव सम्पन्न

आर्य समाज वेद मंदिर लसूडी मुहल्ला बस्ती दानिशमंदा जालन्धर का चुनाव दिनांक 27 सितम्बर 2019 को सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ जिसमें संरक्षक श्री पूर्ण चंद जी, प्रधान श्री यशपाल, उप प्रधान श्री रमेश भगत, उप प्रधान श्री सुरेन्द्र पाल, महामंत्री श्री कमल भारती, कोषाध्यक्ष श्री केवल कृष्ण एवं प्रचार मंत्री श्री कृष्ण लाल जी को चुनाव गया। उल्लेखनीय है कि श्री यशपाल पिछले कई वर्षों से आर्य समाज वेद मंदिर बस्ती दानिशमंदा का नेतृत्व कर रहे हैं। उनके द्वारा किये गये कार्यों की सभी सदस्यों ने प्रशंसा की और अपना विश्वास उनके प्रति प्रकट किया। चुनाव के पश्चात श्री यशपाल ने सभी सदस्यों का हार्दिक धन्यवाद प्रकट किया। इस अवसर पर आर्य समाज के सदस्य श्री पूर्ण चंद जी, श्री दिलीप कुमार जी, श्री रमेश कुमार, श्री दीपक कुमार प्रशान्त, श्री रोहित कुमार, श्री सुरिन्द्र पाल, श्री सेवा राम, श्री सतपाल, श्री जगदीश राज, श्री सोमनाथ, श्री सुभाष चन्द्र, श्री सुदर्शन लाल, श्री चमन लाल, श्री मुकेश कुमार, श्री अशोक कुमार, श्रीमती सीता रानी, श्रीमती कमलेश, श्रीमती उषा रानी, श्रीमती कान्ता रानी, श्रीमती सीता देवी, श्रीमती पुष्पा रानी, श्रीमती जीत रानी, श्रीमती सुमित्रा देवी, श्रीमती जनक रानी, श्रीमती सोमा देवी इत्यादि उपस्थित थे।

आर्य समाज, वेद मंदिर, लसूड़ी मुहल्ला जालन्धर का चुनाव गत दिनों सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर आर्य समाज के पदाधिकारियों का लिया गया संयुक्त चित्र।

कमल भारती
महामंत्री आर्य समाज

वेदवाणी

हे मुमुक्षो! तू उसको जान

अकामो धीरो अमृतः स्वयंभूः रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः।
तमेव विद्वान् न बिभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम्।।
-अथर्व० १०।८।४४

ऋषि-**कुत्सः**।। देवता-**आत्मा**।। छन्दः-**त्रिष्टुप्**।।

विनय-हे मृत्युभय से तर जाना चाहने वाले मुमुक्षो! तू उस एक सर्वव्यापक तत्त्व को दख जो कि सर्वथा 'अकाम' है, जिसमं किसी प्रकार की भी कोई कामना नहीं, अतएव जो कभी भी चलायमान नहीं होता, सदा सर्वथा धीर है; जो कभी न मरेगा और न कभी पैदा हुआ है; जो स्वयं ही अपन आधार से सदा विद्यमान है; जिसे कभी किसी अन्य ने जन्म नहीं दिया, जिस सनातन की सत्ता किसी अन्य के आश्रित नहीं, अतएव जिसकी अमृत सत्ता कभी खण्डित भी नहीं हो सकती, विनाश को नहीं प्राप्त हो सकती; जो आनन्दरस से सर्वथा परिपूर्ण है; हम लोग आनन्ददायक भोजन को यथष्ट खाकर जैस कुछ देर के लिए छके हुए, परितृप्ति की अवस्था में रहते हैं वैसी आप्यायित अवस्था में जो सदा, त्रिकाल में रहता है, जो आप्तकाम है; जिसमें कोई किसी प्रकार की कमी, न्यूनता, अपेक्षा व आवश्यकता नहीं है, जो सर्वथा परिपूर्ण है, अखण्ड है, अतएव जो अकाम हुआ है उसे देख, उस एक तत्त्व को देख, उसे पहचान! उस तत्त्व को अपने अन्दर खोज, अपने अन्दर पहचान! वह दीखता है कि नहीं? क्या तू अपने-आपको वैसा अजर, अमर तत्त्व नहीं देखता? जब तू अपने-आपको अचलायमान, कभी बुड्ढा न होन वाला, एकरस, नित्य, हमेशा एक-समान युवा (जवान) देख लेगा तभी-केवल तभी-तू मृत्युभय से पार होगा। उस सच्चे आत्मस्वरूप को देख लेन के पश्चात् तू शरीर नहीं रहेगा। तब तू वही धीर, अजर, अमर तत्त्व हो जागा।

तब मृत्यु कहाँ रहेगी? तब तो जीने-मरने में कोई भेद नहीं रहता, जीवन-मरण दोनों ही जीवन हो जाते हैं, क नये प्रकार का नित्य जीवन हो जाते हैं। हज़ारों मृत्युओं के बीच में भी आत्मा अपनी अमरता को घोषित करता है, परन्तु जब तक इस आत्मस्वरूप का साक्षात् न हो जाए, मनुष्य अपने देह से बिल्कुल पृथक् अपने-आपको अजर-अमर न देख ले, तब तक मृत्युभय नहीं जा सकता। मृत्यु से निर्भय होने का संसार में अन्य कोई दूसरा उपाय नहीं। जब तक मनुष्य ने यह आत्मस्वरूप न पा लिया हो तब तक वह चाहे जितना विद्वान्, हज़ारों ग्रन्थों को पढ़ने-पढ़ाने और बनाने वाला हो जाए, उपदेष्टा हो जाए, परन्तु वह उसी प्रकार मृत्यु का मारा हुआ फिरता है जैसे कि एक चींटी या एक खटमल मरण-त्रास से डरकर भागता है। देखो, वह अखण्ड, एकरस, सर्वथा अकाम, अचल, अमर, अभय नित्यतत्त्व! यदि मृत्यु को जीतना है तो देखो-अपने धीर, अजर, अमृत, आत्मा को।

स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की तरफ से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक प्रेम भारद्वाज द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर पंजाब से मुद्रित एवं गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से प्रकाशित। सम्पादक-प्रेम भारद्वाज
पीआरबी एक्ट के तहत प्रकाशित सामग्री के चयन हेतु उत्तरदायी किसी विवाद का न्यायिक क्षेत्र जालन्धर होगा। आर एन आई संख्या 26281/74 E-mail: apspunjab2010@gmail.com, www.aryapratinidhisabha.org